गाँधी की गूँज

डॉ0 शिव हर्ष सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर
राजनीतिशास्त्र विभाग
ईश्वर शरण डिग्री कॉलेज,
इलाहाबाद

लार्ड आल्ट्रूचियन ने कहा था कि ''ईसा मसीह की तरह गाँधी जी ने सुदूर पहाड़ियों पर ऐसे संकेत दीप प्रज्जवलित किये थे जिनकी तरफ भावी पीढ़ियाँ अंधकार में अपना मार्ग टटोलेंगी।'' इन शब्दों में कितनी सच्चाई है इसकी पुष्टि श्रीमान ए.आर. गोरे (यू.एस.ए.) और श्री आर.के. पचौरी (आई.पी.सी.सी. प्रमुख) को प्रदत्त उस नोबेल पुरस्कार से होती है जिसने जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में मानवता के समक्ष उपस्थित विपत्तियों को लेकर एकाएक एक गम्भीर चर्चा को जन्म दिया है। डॉ0 पचौरी ने कहा है कि ''भूमण्डलीय तापन (ग्लोबल वार्मिंग) के सन्निकट एवं वास्तविक खतरों के उपशमन हेतु अविलम्ब कुछ न कुछ किया जाना चाहिए। इसी प्रकार ब्रिटेन के प्रधानमंत्री गार्डन ब्राउन ने भी जलवायु परिवर्तन की चुनौती का सामना करने हेतु विश्व का आह्वान करते हुए कहा है कि ''जलवायु परिवर्तन एक ऐसी आग्रहपूर्ण चुनौती है जो कि पर्यावरण के लिए ही नहीं बल्कि शांति, सुरक्षा, समृद्धि एवं विकास के लिए भी खतरा उत्पन्न करती है।''

भूमण्डलीय तापन हमारे सम्मुख खड़ी अनेक समस्याओं सहित, वर्तमान सभ्यता की रुग्णता का मात्र एक लक्षण है। वर्तमान मुद्दों से इधर–उधर भटकने के बजाय आज आवश्यकता इस बात की है कि हम इन समस्याओं के मूल में जायें और उनका समाधान ढूँढने का प्रयास करें।

6 अप्रैल 1921 को यंग इंडिया में लिखते हुए गाँधी जी ने कहा था कि ''सतत् गम्भीरता प्राप्त कर रही समस्याओं का भावी पीढ़ियों से सटीक समाधान प्राप्त करने के लिए हमें कतई इंतजार नहीं करना चाहिए। निष्ठुरता से न्याय करते समय प्रकृति दया नहीं दिखाती है। यदि हम शीघ्र ही नहीं जागे तो हमारा अस्तित्व ही नष्ट हो जायेगा।

अब समय आ गया है कि हम गाँधी जी की इस अर्थपूर्ण मंत्रणा पर गौर करें और संवृद्धि, प्रगति तथा विकास से जुड़ी अपनी धारणाओं में आमूल–चूल परिवर्तन लायें। यह बात अलग है कि गाँधी जी ने अपने प्रयोग भारत में किये क्योंकि इस देश की उन्हें पूर्ण समझ थी तथा इस देश के लोग उनकी सरल भाषा को समझते थे, परन्तु उनका संदेश सार्वभौमिक था और सम्पूर्ण मानवता के लिए था। अपने अमेरिकी मित्रों को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा था कि ''चरखे का संदेश उसकी परिधि से कहीं अधिक विस्तृत है। इसका संदेश सरलता का, मानव सेवा का, दूसरों को आहत किये बिना जीने का तथा गरीब और अमीर, पूँजीपति एवं मजदूर और राजा तथा किसान के मध्य अटूट बन्धन के सृजन का संदेश है इसका व्यापक संदेश स्वाभाविक रूप से सबके लिए है।''[1] इसी प्रकार एक चीनी राजदूत के साथ बातचीत के दौरान गाँधी जी ने विश्व के समक्ष भविष्य में आने वाली समस्याओं का पूर्वानुमान करते हुए कहा था कि

''दुनिया आज आत्म–विनाश के कगार पर खड़ी लड़खड़ा रही है। घृणा एवं हिंसा की ज्वालाएँ हमें निगल जाने की धमकी दे रही हैं।''[2]

पिछले कुछ एक दशकों से जलवायु परिवर्तन एवं भूमण्डलीय तापन जैसी समस्याओं का हल ढूँढ़ने हेतु अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में चर्चाएँ हो रही हैं, परन्तु इन सम्मेलनों का समापन प्रायः विकसित एवं विकासशील देशों द्वारा एक दूसरे पर आरो–प्रत्यारोप मढ़कर तथा पाखण्डपूर्ण प्रस्ताव पारित करके कर दिया जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस तरह के विचार–विमर्श में भाग लेने वाले उच्चस्थ राजनीतिज्ञ एवं नौकरशाह वर्तमान व्यवस्था एवं सभ्यता की मूलभूत कमियों से पूर्णतया अनभिज्ञ हैं। इस तरह की गोष्ठियों में उपस्थित सजे–धजे एवं सुन्दर चेहरों को देखकर उन लोगों के प्रस्तुत समस्याओं के प्रति लापरवाहीपूर्ण रवैये का अन्दाज़ा आसानी से लगाया जा सकता है। ये लोग अपनी जीवनशैली के साथ समझौता करने एवं उसमें परिवर्तन लाने के लिए तैयार नहीं हैं। समस्या का सार इन बढ़ती हुई समस्याओं का सामना करने का हमारा भौतिकतावादी एवं यांत्रिक उपागम है।

इस संदर्भ में गाँधी जी की दशकों पहले कही गयी यह बात ध्यातव्य है कि ''मैं इस बात पर विश्वास नहीं करता कि आवश्यकताओं का बहुलीकरण और उनकी आपूर्ति हेतु गढ़ी गयी मशीनें विश्व को उसके लक्ष्य के एक भी कदम समीप ले जा रही हैं ....। मैं दूरी और समय ख़त्म करने, पाश्विक क्षुधाओं को बढ़ाने और फिर उनकी संतुष्टि की खोज में कुछ भी कर गुज़रने की उन्मत्त इच्छा के प्रति पूरे मन से घृणा करता हूँ। यदि आधुनिक सभ्यता इसी सब का नाम है तो मैं इसे पैशोचिक कहूँगा।''[3] अपनी पुस्तक हिन्द स्वराज में भी गाँधी जी ने लिखा है कि ''यह सभ्यता ऐसी है कि आप धैर्य रखिए यह स्वतः ही नष्ट हो जायेगी।''[4] इसी पुस्तक के पृष्ठ 37 पर उन्होंने टिप्पणी की है कि ''यह सभ्यता उस चूहे की तरह है जिसका कुतरना शुरू में अच्छा लगता है। जब इसका पूर्ण प्रभाव साकार होगा तब हम महसूस करेंगे कि आधुनिक सभ्यता के अन्धविश्वास की तुलना में धार्मिक अन्धविश्वास कितना अहानिकर है। मैं धार्मिक अंधविश्वासों के सातत्व की वकालत नहीं कर रहा हूँ। उनका विरोध तो हम निश्चित रूप से पूरी शक्ति के साथ करेंगे...।''

सभ्यता के विकास के दौरान हमारी आवश्यकताओं ने मशीन और साधारण प्रौद्योगिकी का सृजन किया। आधुनिक सभ्यता में यह स्थिति उलट गयी है। आज के विश्व में प्रौद्योगिकी ही प्रमुख खलनायक बन गयी है क्योंकि अब यह आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं करती बल्कि माँगों का सृजन करती है। प्रौद्योगिकी ने ''एक ऐसे युग का सृजन किया है जो केवल मनोरंजन उद्योग द्वारा उत्पादित कृत्रिम भावुकताओं और सुखों के नशे में ही चूर नहीं है बल्कि शक्ति के सपनों और बाहय आकाश के विजय के ख्वाबों के नशे में भी चूर है।''

आज का विश्व भूमण्डलीय तापन, प्रदूषण, पर्यावरणीय असंतुलन और संसाधन समाप्ति जैसी समस्याओं के अतिरिक्त भी अनेक समस्याओं से जूझ रहा है, परन्तु उपरोक्त तमाम समस्याओं से कहीं अधिक महत्वपूर्ण वे सामाजिक एवं भावनात्मक समस्यायें हैं जिन्हें प्रौद्योगिकी के इस अनियंत्रित विकास ने मानवता के समक्ष खड़ा कर दिया है। इन्हीं में से एक असहायता और निराशा की भावना की समस्या है।

बरट्रैन्ड रसेल का यह कथन इसी असहाय और निराशा की अभिव्यक्ति है कि ''हम शायद मानवता के अन्तिम युग में जी रहे हैं, और यदि ऐसा है तो मानव के इस विलोपन के लिए विज्ञान ही जिम्मेदार होगा''[5] अल्बर्ट श्वीजर ने भी इसी भावना को व्यक्त करते हुए कहा है कि ''अब यह हर किसी को स्पष्ट हो गया है कि वर्तमान सभ्यता की आत्महत्या की प्रक्रिया प्रगति पर है। इसका जो कुछ भी अभी शेष है वह सुरक्षित नहीं है।''[6]

हिंसा की अनिवार्यता का मनोविज्ञान और युवा पीढ़ी की यह मनोवृत्ति कम चिन्ता का विषय नहीं है। हिंसा प्रकट रूप में अथवा शोषण के रूप में गुप्त भी हो सकती है। अर्थशास्त्रियों द्वारा दिया गया 'अधिकतम लोगों के अधिकतम सुख' का नारा इसी दिशा में उठाया गया पहला कदम था।

अपने दैनिक जीवन में असुरक्षा एवं अस्थिरता की भयावह अनुभूति से पीड़ित व्यक्ति का समाज से विलगाव हो गया है। सतत् परिवर्तन के फलस्वरूप सतत् अस्थिरता बनी हुई है। सामाजिक सरोकार का पूर्ण अभाव दिख रहा है। व्यक्ति न तो मानव रह गया है और न ही नागरिक, बल्कि वह उपभोक्ता या ग्राहक बन कर रह गया है।

आज प्रौद्योगिकी विशेषज्ञों का क्षेत्र है, और विशेषज्ञ वह है जो कम से कम के बारे में अधिक से अधिक जानता है। मानवीय नियंत्रण से परे इस प्रौद्योगिकी पर निर्भरता की वजह से हमें चारों ओर केन्द्रीकरण दिखाई दे रहा है। शक्ति आधुनिक राज्य जैसी दुर्जेय मशीन और राष्ट्रीय सीमाओं से परे उन बहुराष्ट्रीय निगमों में केन्द्रित है जो प्रतिस्पर्धा, शोषण, अवपीड़न और छल–कपट जैसे युक्तियों पर निर्भर है। ऐसा प्रतीत होता है कि समाज को राज्य के लिए जीना पड़ेगा और मनुष्य को शासनतंत्र के लिए।

यदि हम राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सम्मेलनों पर दृष्टिपात करें तो पायेंगे कि सजे–धजे स्वस्थ एवं चमकते चेहरे वाले लोग विभिन्न मुद्दों पर चर्चा कर रहे हैं और सरकारों पर जिम्मेदारी मढ़ते जा रहे हैं। गाँधी जी ने एक बार कहा था कि ''शांति सम्मेलनों के माध्यम से नहीं स्थापित की जा सकती है। हम देखेंगे कि शांति, श्रेष्ठ विचार एवं भावनाएं सम्मेलनों के दौरान ही भंग हो रहे हैं।''

आज का विश्व एवं मानवता जिन रुग्णताओं से ग्रस्त हैं उनका उपचार, जीवन एवं प्रयोजन तथा समस्याओं के समाधान हेतु प्रौद्योगिक क्षमता पर एकल निर्भरता के प्रति हमारे दृष्टिकोण के पूर्ण कायाकल्प में निहित है। जैसा कि शांति के लिए नोबेल पुरस्कार विजेता अल गोरे ने कहा है कि ''हम एक प्रकार के प्रौद्योगिक अक्खड़पन के शिकार हो गये हैं जो हमें यह मानने के लिए प्रवृत्त करता है कि हमारी नवीन शक्तियां असीमित हैं।'' (अर्थ इन बैलेन्स, पृ0 206) सीजर वाउट ने अपनी पुस्तक 'यूजिंग आउटर स्पेस फॉर मैनेजिंग मैटर्स ऑन अर्थ' के पृष्ठ 5 पर लिखा है कि ''समस्या की प्रकृति ही ऐसी है कि केवल विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के द्वारा इसका समाधान नहीं किया जा सकता है। संयुक्त प्रयास से समस्या का सामना करने हेतु राजनीतिक समाधान में सहायक उपकरणों पर शोध एवं उनका विकास।''

प्रौद्योगिकी की एक विशेषता यह है कि इसके विकास की कोई सीमा नहीं है। गाँधी जी का कथन है कि ''मशीनरी एर्प की उस मांद की तरह होती है जिसमें सैकड़ों सांपों के लिए एक छिद्र हो सकता है ...। मशीनरी आधुनिक सभ्यता का प्रमुख प्रतीक है ... यह पाप की अभिव्यक्ति है।''

प्रौद्योगिकी की अन्य विशिष्टताएँ ये हैं कि यह मानव और पशु श्रम का स्थान ले लेती हैं, इसकी अपनी स्वतंत्र इच्छा एवं प्रतिभा होती है तथा यह अतोषणीय माँगों और आवश्यकताओं के सृजन पर निर्भर होती है। यह कुछ एक हाथों में ही अत्यधिक भौतिक शक्ति एवं धन का संकेन्द्रण कर देती है। इसका एक अन्य लक्ष्य 'परजीविता' है। मनुष्य मशीन के अनुसार चलने के लिए बाध्य हो जाता है। इन विशेषताओं के साथ–साथ व्यापक अनुत्तरदायित्व भी जुड़ा होता है।

ये विचार मानवता को बेलगाम प्रौद्योगिकी के गर्भ में छिपे खतरों से सचेत करने के लिए अभिव्यक्त किये गये थे। गाँधी जी प्रौद्योगिकी जैसी चीज के विरोधी नहीं थे बल्कि उस प्रौद्योगिकी के विरोधी थे जो हमें अपना गुलाम बना लेती है और जो मानव नियंत्रण से परे है। वह उस प्रौद्योगिकी के समर्थक थे जो व्यक्तियों और छोटे–छोटे व्यक्ति–समूहों का सशक्तीकरण करती हैं, जो ऊर्जा के पूर्व स्रोतों पर निर्भर होती है और प्रदूषणकारी नहीं है तथा जो शांति सहयोग, सहानुभूति और सार्वभौमिक भ्रातृत्व की ओर ले जाती है।

हम प्रायः यह सुनते–पढ़ते रहते हैं कि विश्व विनाश के कगार पर खड़ा है। अतः यह अत्यावश्यक है कि हम एक स्वस्थ समाज की विशेषताओं को जानें और समझें। ऐसे कुछ सुझाव गाँधी जी ने प्रस्तुत किये हैं जो निम्नवत् हैं–

"एक सुव्यवस्थित समाज में किसी व्यक्ति के लिए अपना जीविकोपार्जन दुनिया का सहजतम कार्य होना चाहिए। वास्तव में किसी देश की सुव्यवस्था की कसौटी उसमें उपस्थित करोड़पतियों की संख्या नहीं है, बल्कि उसके करोड़ो लोगों में भुखमरी की अनुपस्थिति है।"[7]

एक स्वस्थ समाज में मनुष्य की कामयाबी इस बात में निहित होगी कि "अस्तित्व के लिए संघर्ष 'पारस्परिक सेवा के लिए संघर्ष' से प्रतिस्थापित हो जाए। ऐसे समाज में पाशविक कानून का स्थान मानवीय कानून ले लेगा।"[8]

सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था द्वारा पूर्ण रोजगार प्रदान किया जाना चाहिए। बेरोजगारी एक प्रकार का आर्थिक मृत्युदण्ड है। लार्ड बीवरिज ने अपनी सामाजिक सुरक्षा की योजना में बेरोजगारी को ऐसे अनेक बड़े दैत्यों में से एक बताया है जिससे लड़ना होगा। करोड़ो लोगों की बेरोजगारी एवं बेकारी अनिवार्यतः असामाजिक मूल्यों और यहाँ तक कि खूनी संघर्ष को जन्म देगी। रोजगार का अर्थ है कि कार्य सुखदायक एवं संतोषप्रद हो। औद्योगिक कार्य के साथ दुःख एवं कष्ट अवश्य जुड़ा होता है। गाँधी जी ने लिखा है कि "मुझे तब तक संतुष्ट नहीं होना चाहिए जब तक कि सभी लोगों के पास प्रचुर मात्रा में कार्य न हो जाय। जैसे कि प्रतिदिन आठ घंटे का कार्य ...। उन्होंने यह भी लिखा है कि "एक स्वस्थ समाज में कुछ लोगों के पास समृद्धि का संकेन्द्रण और करोड़ो लोगों में बेरोजगारी एक बड़ा सामाजिक अपराध अथवा रोग है जिसका उपचार किये जाने की आवश्यकता है।"[9]

एक जीवन्त समाज और कई विशेषताओं की चर्चा की जा सकती है, परन्तु इन सब में यह बात अन्तर्निहित है कि वर्तमान सामाजिक–आर्थिक–राजनीतिक–प्रौद्योगिक प्रणाली का पूर्ण परित्याग कर दिया जाना चाहिए। वर्तमान व्यवस्था में ऐसा कुछ भी नहीं है जो अलंघनीय हो। औद्योगिक उत्पादन का

तथाकथित किफायती चरित्र इसका कोई अन्तर्भूत गुण नहीं है बल्कि मात्र एक उदात्त गुण है जो कि उन मानक मूल्यों पर निर्भर करता है जिन्हें समाज ने अंकीकार कर रखा है अथवा अपनाने योग्य समझता है।'' (इकोनामिक थाट ऑफ महात्मा गांधी, पृष्ठ 605)

मौसिक स्ट्रांग का कथन है कि ''देशों का आर्थिक विकास लोगों के शारीरिक विकास की भाँति एक सीमा तक तो स्वाभाविक एवं स्वास्थ्यकर होता है। इसके बाद यह कैन्सरकारी हो सकता है...। इस अवस्था के आगे हमें बौद्धिक, नैतिक और सामाजिक विकास को ही वास्तविक विकास मानना चाहिए।''[10] इसी प्रकार प्रोफेसर गुन्नार मिर्डल ने भी टिप्पणी की है कि ''यदि हम अब भी उत्पादन और उपभोग पर तथा अपनी जीवन शैली पर संयम आरोपित करने तथा इसमें परिवर्तन लाने के लिए तैयार नहीं हैं तो हम निश्चित ही महाविपत्ति को आमंत्रित करेंगे।''[11] गाँधी जी ने बहुत पहले ही कुछ इसी तरह के परामर्श प्रस्तुत किये थे। उन्होंने कहा था कि ''धर्म को किसी लायक होने के लिए इसमें निश्चित ही धर्म की शर्तों क समानेय होने की क्षमता होनी चाहिए ..., सच्चे अर्थशास्त्र में दास रखने की कोई गुंजाइश नहीं होती, चाहे वे मानव हों या पशु हों, या फिर मशीने ही क्यों न हों। दासता के लिए अर्थशास्त्र में कोई भी स्थान नहीं है।''[12] एक अन्य अवसर पर उन्होंने टिप्पणी की थी कि ''मैं यह विश्वासपूर्वक स्वीकार करूँगा कि मैं अर्थशास्त्र और नीतिशास्त्र के मध्य कोई सुस्पष्ट भेद नहीं मानता। वह अर्थशास्त्र जो किसी व्यक्ति या राष्ट्रके नैतिक कल्याण को क्षति पहुँचाता है, अनैतिक है और इसलिए पापपूर्ण है।''[13]

दो विश्वयुद्ध और जापान पर नाभिकीय बमबारी तथा महाविनाश के हथयारों का बढ़ता हुआ परिष्करण, बढ़ती हूई हिंसा एवं शोषण, चारों ओर हो रहे प्राकृतिक संसाधनों के निःशेषण, प्रदूषण, पर्यावरणीय असन्तुलन, प्रतिद्वन्द्विता और विकास के लिए ऊर्जा की कमी को दूर करने की दलील पर श्राष्ट्रों के मध्य नाभिकीकरण के लिए लगी होड़ आदि आगामी संकटों के चेतावनी संकेत हैं।

पुरानी, अप्रचलित राजनीतिक संरचनाओं, अश्मीभूत परम्पराओं और अनन्य लोगों एवं नीतियों का शीघ्रातिशीघ्र परित्याग कर दिया जाना चाहिए। गाँधी जी ने चेतावनी दी है कि ''शैतान ने बड़ी ही बारीकी से ऐसा मायाजाल बिछा रखा है जो कि बड़ा मोहक है। जब उचित और अनुचित के मध्य की विभाजक रेखा इतनी पतली है कि बिल्कुल अबोधगम्य है (परन्तु विभाजक रेखा का अस्तित्व अवश्य है) तो इसके उल्लंघन का अर्थ निश्चित मृत्यु हो सकता है।''[14] गाँधी जी ने यह भी बताया है कि ''सभ्यता सच्चे अर्थ में माँगों के बहुलीकरण में नहीं बल्कि माँगों के सुविचारित एवं स्वैच्छिक न्यूनीकरण में निहित होती है। केवल और केवल यही दृष्टिकोण सच्ची खुशी और संतोष देता है तथा व्यक्ति की सेवा करने की क्षमता में वृद्धि करता है।''[15] उनका कथन है कि ''हम ऐसे लोग विरले ही पाते हैं जो कि अपने ही विरुद्ध तर्क प्रस्तुत कर रहे हों। जो लोग आधुनिक सभ्यता के नशे में चूर हैं उनके द्वारा इसके विरोध में लिखे जाने की सम्भावना नहीं है।''

अब समय आ गया है कि अल गोरे (यू.एस.ए.) और आर.के. पचौरी (आई.पी.सी.सी. प्रमुख) सरीखे लोगों को आगे आकर भौतिक समृद्धि और मानवीय नियंत्रण से परे इस प्रौद्योगिकी के लिए पागल दौड़ के विरुद्ध एक जन आन्दोलन संगठित करना चाहिए। ऐसे आन्दोलनों के प्रति जनता तभी आकर्षित होगी और

इनमें लोग केवल तभी सहभागिता करेंगे जब वे आधुनिक सभ्यता के खिलौनों का परित्याग करके अपनी जीवनशैली में तदनुसार परिवर्तन कर लेंगे। इसके लिए अतिनिष्ठुर तपस्या की आवश्यकता है। हमें गाँधी जी के तरीके से सीख लेनी चाहिए जिसकी ओर संकेत करते हुए गुरूदेव टैगोर ने लिखा है कि ''उन्हीं की तरह के कपड़े पहने हुए वह हजारों निराश एवं गरीब लोगों के मध्य रुक जाते थे। उनसे उन्हीं की भाषा में में बात करते थे, यह जीता जागता सच था, किसी किताब का उद्धरण नहीं....।'' ऐसे आन्दोलनों को सफल बनाने हेतु गाँधी जी ने परामर्श दिया है कि ... आप प्रथम परिवर्तित व्यक्ति से आरम्भ करें। यदि ऐसा एक भी व्यक्ति मिल जाता है तो आप इस एक के आगे अनेक शून्य जोड़ सकते हैं और ऐसा प्रथम शून्य एक को दस बना देगा और इसके बाद के प्रत्येक शून्य का योग पूर्ववर्ती संख्या के दस गुने के बराबर परिणाम देगा। यदि प्रारम्भ ही शून्य से होता है, अर्थात् यदि कोई एक भी अपने को परिवर्तित करने का शुभारम्भ नहीं करता है तो शून्यों के गुणन का परिणाम शून्य ही होगा।''[16]

आशा है कि अल गोरे और आर.के. पचौरी जैसे लोग ऐसे आन्दोलनों का आगाज करेंगे और गाँधी जी की इस सलाह पर अवश्य गौर करेंगे कि केन्द्रीकरण की व्यवस्था एक शांतिपूर्ण एवं अहिंसक समाज के निर्माण में विसंगति उत्पन्न करेगी। ऐसे लोगों को गाँधी जी की इस सलाह को भी ध्यान में रखना चाहिए कि ''अहिंसा (लेखक के विचार से शांतिपूर्ण सह अस्तित्व) पर आधारित समाज में केवल गाँवों में बसे मानव समूह (आमने–सामने बसी मानव इकाइयाँ) होते हैं जिनमें स्वैच्छिक सहयोग ही आत्मगौरव एवं शांतिपूर्ण सहअस्तित्व की शर्त होती है। ऐसा समाज जो हिंसा का सामना हिंसा (शोषण) से करने की अपेक्षा और प्रबन्ध करता है वह या तो अनिश्चितता या अस्थिरता पूर्ण जीवन जियेगा या फिर प्रतिरक्षा के उद्देश्य से बड़े–बड़े शहरों, शस्त्रागारों एवं बारूदखानों का सृजन करेगा।''[17] (ई.टी.एम.जी., पृ0 595)

किसी न किसी को तो शुरूआत करनी ही पड़ेगी। प्रत्येक दिन एक नई सुबह के साथ प्रारम्भ होता है और यदि हमारे कदम गलत दिशा में बढ़ गये हों तो उन्हें वापस लेने का प्रारम्भ करने के लिए कभी भी देर नहीं होती है। लम्बी से लम्बी यात्रा पहले कदम से ही प्रारम्भ होती है और किसी न किसी को वह पहला कदम उठाना पड़ता है। हमें हर हाल में यह समझना और अहसास करना होगा कि एक गाँधी शांति को अपना जीवन समर्पित करके सारे विश्व में चर्चा का विषय बन गया। बहुत सारे लोग यदि शांति और अहिंसक सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था के सृजन हेतु अपने–अपने जीवन का कुछ समय अर्पित कर दें तो वे इतिहास बना सकते हैं। सत्य ही कहा गया है कि कल का आदर्शवादी आज का एकमात्र यथार्थवादी बन गया है।

संदर्भ सूची :

1. माथुर जे.एस., इकोनामिक थॉट ऑफ महात्मा गाँधी (ई.टी.एम.जी.) पृष्ठ 477
2. प्यारे लाल, लास्ट फेज, खण्ड द्वितीय, पृष्ठ 202
3. ई.टी.एम.जी., पृष्ठ 60–81
4. एम.के.जी., इण्डियन होम रूल, पृष्ठ 33

5. बी. रसेल, इम्पैक्ट ऑफ साइन्स ऑन सोसाइटी, पृष्ठ 27

6. श्वीजर, अल्बर्ट, डिके रेस्टोरेशन ऑफ सिविलाइजेशन, पृष्ठ 16

7. ई.टी.एम.जी., पृष्ठ 521

8. वही, पृष्ठ 524

9. माथुर, एलिंग वर्ल्ड ऐण्ड गाँधियन आल्टसेटिव्स, पृष्ठ 70

10. वही, उद्धृत, पृष्ठ 34

11. वही

12. एलिंग वर्ल्ड ऐण्ड गाँधियन आटरनेटिव्स, पृष्ठ 45–46

13. वही, पृष्ठ 46

14. ई.टी.एम.जी., पृष्ठ 29

15. वही, पृष्ठ 612

16. एलिग वर्ल्ड ऐण्ड गाँधियन आल्टरनेटिव्स, पृष्ठ 91

17. ई.टी.एम.जी., पृष्ठ 595